सेर्गेय बरूज़्दीन
रवि और शशि

सेर्गेय बरूज़्दीन

रवि और शशि

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह
मास्को

С. БАРУЗДИН

РАВИ И ШАШИ

रवि और शशि — अभी बच्चे हैं। जैसे सब बालक होते हैं, वे कभी तो खेलते कूदते हैं, और कभी रोने लगते हैं। और इनका भोजन भी छोटे बालकों की ही तरह है, चीनी और दूध पड़ी हुई चावल की खीर उनके मुंह के अन्दर डाल दी जाती है। यदि ऐसा न हो तो वे खा भी न सकें।

यदि रवि और शशि रूसी भाषा समझते होते, तो वे जान पाते कि उनके नामों के हमारी भाषा में क्या अर्थ हैं: "सोन्त्से" और "लूना"—सूरज और चन्द्रमा।
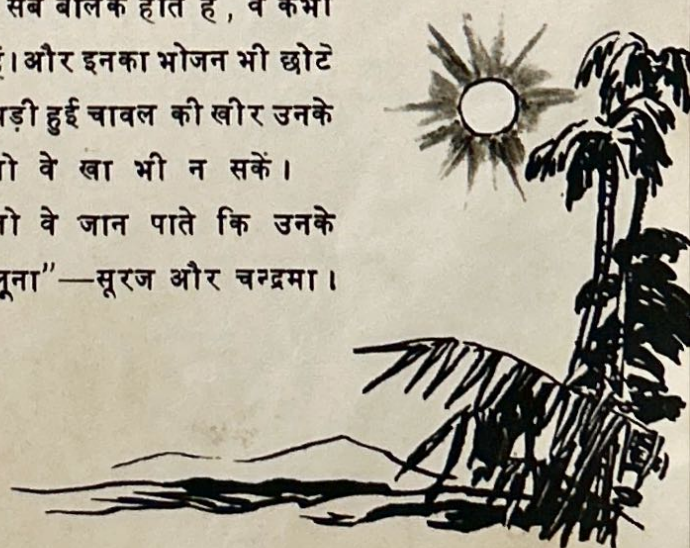
परन्तु वे अभी तक अपने रूसी नाम नहीं जानते हैं।

"सोन्त्से! सोन्त्से!" — "सूरज! सूरज!" बालक रवि को पुकारते हैं, परन्तु वह अपनी सूंड़ तक नहीं हिलाता।

"लूना! लूना!" — "चन्द्रमा! चन्द्रमा!" बालक शशि को आवाज़ देते हैं, परन्तु वह मुड़ कर देखती तक नहीं।

"अवश्य ही हम इन्हें पहचानने में भूल कर रहे हैं" — बालक कहते हैं। "देखो यह एकदम एक दूसरे की तरह हैं।"

यह तो सच है कि रवि और शशि बिलकुल एक दूसरे की तरह हैं। परन्तु वे दोनों आपस में भाई बहिन नहीं हैं, और दूर के सम्बन्धी भी नहीं हैं।

रवि और शशि भारतवर्ष के हाथी के बच्चे हैं, और ये थोड़े ही दिन हुए हमारे देश में आए हैं। इन्हें भारतवर्ष के प्रधान-मंत्री जवाहरलाल नेहरू ने सोवियत बच्चों को उपहारस्वरूप भेजा है।

"जब मैं सोवियत संघ में था," — नेहरू ने लिखा, — "मुझे बच्चों की एक बहुत बड़ी संख्या से मिलने का आनन्द प्राप्त हुआ, और हर जगह उन्होंने मुझे भारतवर्ष के बच्चों के लिये संदेसे दिये। अब मैं भारत के बच्चों की तरफ़ से, सोवियत संघ के बच्चों के लिये दो कुछ बड़े उपहार भेजता हूं। ये उपहार — दो हाथी के बच्चे हैं। यद्यपि ये बड़े दिखायी देते हैं, वास्तव में ये अभी बच्चे हैं, ये केवल साल भर के हैं। ये सोवियत संघ के बच्चों के पास, भारत के बच्चों के दूत हो कर जा रहे हैं और अपने साथ मित्रतापूर्ण शुभ कामनाएं ले जा रहे हैं...। मैं आशा करता हूं कि सोवियत संघ के बच्चे इन छोटे दूतों से मित्रता करेंगे और भारत के बच्चों का स्मरण करेंगे, जिनके प्रतिनिधि ये दूत हैं।"

उन्हीं हमारे छोटे मित्र — रवि और शशि को, — यह छोटी सी पुस्तक समर्पित है।
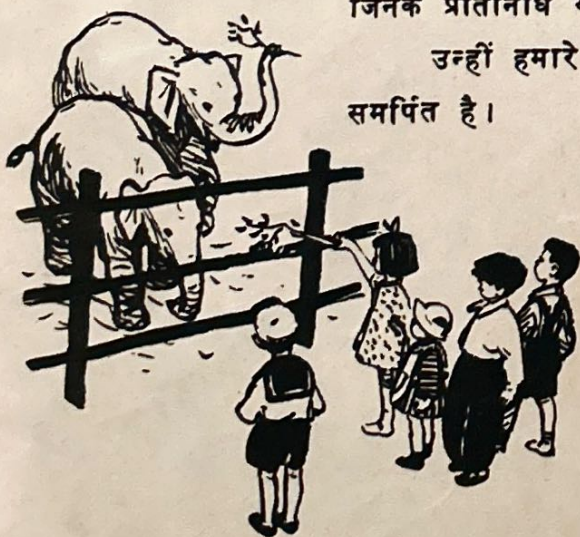
रवि की जन्मभूमि

यहां से सुदूर देश भारतवर्ष के दक्षिण में एक सुन्दर समृद्ध प्रदेश है जिसका नाम मैसूर है।

यहीं रवि ने जन्म लिया था।

रवि की मां — एक काम करने वाली हथिनी है। उसका नाम ललिता है।

इस बात को आठ बरस हो गये जब ललिता जंगलों में पकड़ी गयी थी और पालतू बनायी गयी थी। तब से यह हथिनी आदमियों को काम करने में सहायता देने लगी।

रवि प्रतिदिन अपनी माता के साथ काम पर जाता था। निश्चय ही
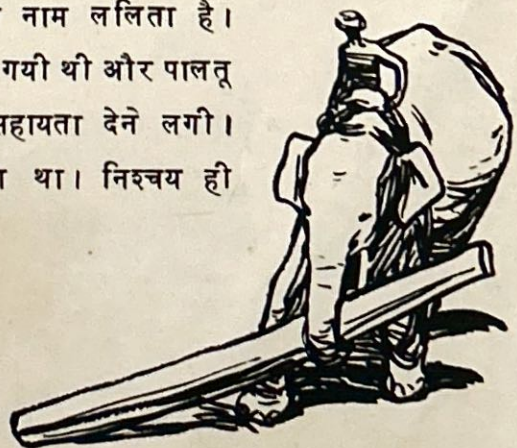
अभी रवि स्वयं काम करने के योग्य ना था। वह खाली देखता रहता था। कितनी आसानी और सरलता से ललिता भारी लट्ठों, रूई की गांठों, भारी पत्थरों और चावल की बोरियों को उठा लेती है।

एक दिन सवेरे ललिता ने लारियों पर ईख के गट्ठे लादे। रवि देख रहा था कैसे उसकी माता सूंड़ से भारी गट्ठों को उठा लेती है, और फिर वह अपने आप भी काम में लग गया। उसने अपनी सूंड़ से गट्ठे में से ईख का डण्डा निकाल लिया और उसे उठाकर ले जाने लगा। डण्डा लम्बा था और एक किनारे से ज़मीन पर घिसट रहा था। परन्तु रवि निरुत्साह नहीं हुआ। वह लारी तक डण्डे को घसीट ले गया, और वहां उसे अपनी माता को दे दिया। अपने आप ईख के डण्डे को लारी पर रखने की सामर्थ्य रवि में नहीं थी।

जब रवि वापस लौटा तब उसका साहस और भी बढ़ गया था, अबकी बार उसने अपनी सूंड़ में ईख के सारे गट्ठे को लपेट लिया। एक बार खींचा, दूसरी बार खींचा — परन्तु गट्ठा अपनी जगह से न हटा। रवि ने एक बार फिर ज़ोर लगाया कि अचानक उसके पैर लड़खड़ा गये और वह गिरते गिरते बचा।

ललिता यह देख रही थी। वह रवि के पास आई और प्यार से उसे अपनी सूंड़ में समेट लिया और दूसरी ओर ले गई।

बेटे! अभी तेरे काम करने का समय नहीं आया है!

शशि से जान-पहचान

रवि बड़े शान्त और गम्भीर स्वभाव का है। जब इसकी गर्दन में रस्सी बांधी गई और इसे एक ओर ले जाया जाने लगा तब न तो इसने विरोध किया और न ही यह चिंघाड़ा। वह आदमियों के बीच रहता था और किसी से भी डरता नहीं था।

रवि बंगलौर नामक नगर में लाया गया। यहां रेलवे-स्टेशन पर एक मालगाड़ी उसके लिये प्रतीक्षा कर रही थी।

डिब्बे के फ़र्श पर घास बिछी हुई थी और बीच में एक जंगला लगा था।

लकड़ी के पुल के सहारे रवि डिब्बे में चढ़ गया और जंगले के बायीं ओर खड़ा हो गया। वहां पहुंचते ही वह काम में भी लग गया। सूंड़ से मुट्ठी भर घास उठा कर मुंह में डालता, दूसरी बार उठा कर अपनी पीठ पर डालता, इसी प्रकार फिर मुंह में और फिर पीठ पर।

इस बीच में इसी काम में लगे हुए रवि ने किसी की चिंघाड़ सुनी। उसने डिब्बे के दरवाज़े से बाहर झांक कर देखा और वहां शशि को खड़ा पाया। शशि अड़ी हुई थी और डिब्बे के अन्दर जाना नहीं चाहती थी।

रवि आश्चर्य से शशि की ओर देखता रहा। वह जानना चाहता था कि क्यों वह इतनी ज़िद कर रही थी और चिंघाड़ रही थी।

वास्तव में रवि को पता नहीं था कि अभी कुछ ही दिन हुए शशि कुर्ग के सुदूर जंगलों में पकड़ी गयी थी, और अभी वह मनुष्यों को देखने की अभ्यस्त नहीं हुई थी।

अन्त में दो आदमियों ने शशि को डिब्बे के भीतर खींच लिया, और उसे जंगले के दाहिनी ओर खड़ा कर दिया।

डिब्बे के अन्दर कुछ कुछ अंधेरा था परन्तु इसके कारण रवि को अपने पड़ोसी की ओर सूंड़ फैलाने में कोई विघ्न नहीं पड़ा। उसने फूत्कार किया और हिनहिनाया भी, परन्तु शशि ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। वह कोने में छिप गई और सिर झुका लिया।

आखिरकार डिब्बा रेलगाड़ी में लगा दिया गया।

इंजनड्राइवर ने सीटी दी और ट्रेन चलने लगी।

शशि एक पैर से दूसरे पैर पर खड़ी होने लगी और अपना सिर जंगले की ओर घुमाने लगी। इस प्रकार ट्रेन की गति के अनुसार खड़ा होना कहीं अच्छा था।

रवि थोड़ी देर तो अपनी जगह खड़ा हुआ छटपटाता रहा, फिर वह भी आकर जंगले के पास खड़ा हो गया।

जान-पहचान शुरू हो गई।

लम्बी यात्रा के आरम्भ से पहले

अगले दिन रवि और शशि बम्बई के बड़े नगर में पहुंच गये। उनका डिब्बा समुद्र के बन्दरगाह तक ले जाया गया, और वहां सुरक्षित रेलों पर खड़ा कर दिया गया। परन्तु पता तो यह चला कि यात्रा अब भी समाप्त नहीं हुई थी। हाथियों को अब लम्बी यात्रा के लिये तैयार किया जा रहा था।

बन्दरगाह में आरियों और कुल्हाड़ियों का शब्द सुनाई देने लगा। ये बढ़ई थे जो रवि और शशि के लिये विशेष प्रकार के कटघरे बना रहे थे। अवश्य ही हाथियों के कटघरों को आरामदेह और विस्तृत होना चाहिये, परन्तु उनका
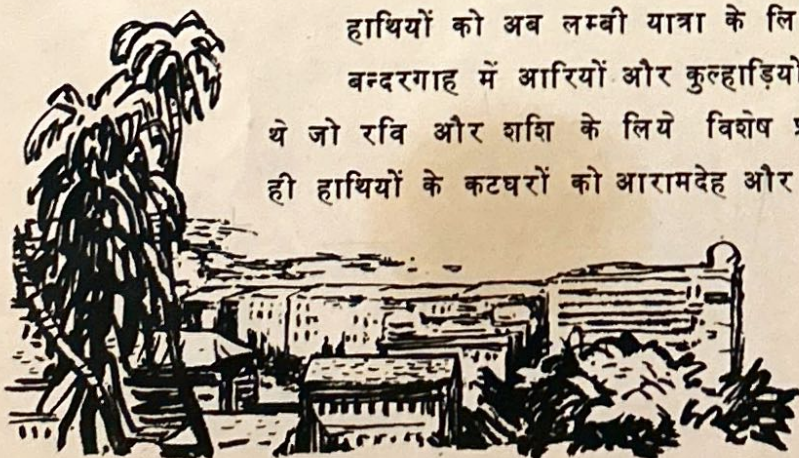
मज़बूत होना इससे भी अधिक आवश्यक है। इस लिये ये मामूली लकड़ी के नहीं बनाये गये, परन्तु सबसे मज़बूत भारतीय "शीशम" की लकड़ी के बनाये गये।

कपड़े सीने की दूकानों में मशीनें चलने लगीं। यहां दर्ज़ी रवि और शशि के लिये विशेष प्रकार की झूलें तैयार कर रहे थे। हाथियों के लिये झूलों का आरामदेह और सुन्दर होना तो आवश्यक था ही, इससे भी अधिक आवश्यक था कि वे खूब गरम हों। इस लिये झूलें सबसे गरम ऊनी कपड़े की बनाई गईं।

बन्दरगाह में लारियों के हार्न सुनाई देने लगे। लारी-ड्राइवर घाट पर चावल और शक्कर, ईख और दूध, अनन्नास और पिस्ते, केले के पेड़ों के खम्भे, हरी घास और सूखा चारा ला रहे थे। ठीक है! रवि और शशि यात्रा के समय खूब सन्तुष्ट रहें, वे अपने स्वास्थ्य के लिये सबसे स्वादिष्ट और सरस भोजन खायं!

जहाज़ पर लदाई

जब सब तैयारियां पूरी हो चुकी थीं, तब बम्बई बन्दरगाह के घाट पर "स्तावरोपोल" नामक एक सोवियत जहाज़ आया।

"अब हम लादना शुरू कर सकते हैं" — कप्तान चेरनोब्रोवकिन ने कहा।

जहाज़ के पास दो ट्रक आकर लगे जिनमें ठेले लगे हुए थे। पहले ठेले पर रवि का कटघरा खड़ा था, और दूसरे पर शशि का।

एक भारी बोझ उठाने वाले क्रेन का हाथ पहले ठेले की ओर मोड़ा गया। कहीं रवि डर न जाय इस लिये उसके कटघरे को तारपुलिन से ढक दिया गया, और इसे लोहे की रस्सियों से जकड़ कर बांध दिया गया।

परन्तु रवि डरा नहीं। जैसे ही बोझ उठाने वाले क्रेन ने रस्सियों को खींचा, रवि ने पहले तो अगले और फिर पिछले पैर सिकोड़े, और कटघरे के फ़र्श पर बिछी हुई सूखी और नरम घास पर लेट गया।

कटघरा यहां थोड़ा हिला डुला, और ठेले से अलग हो गया, और रवि धीरे धीरे उठता हुआ घाट के ऊपर से जहाज़ तक पहुंच गया। उसे अपने

आप को सम्हालने का भी समय न मिला क्योंकि वह डेक के किनारे पर पहुंच चुका था।

अब शशि की बारी आई।

बोझ उठाने वाले क्रेन ने अपना हुक उसके कटघरे में फंसा दिया। चुपचाप लेट जाने के बदले शशि एक कोने से दूसरे कोने में भागने लगी और ऊंची, तेज़ और रोती हुई आवाज़ से चिंघाड़ने लगी।

अचानक शशि को तुरही की सी आवाज़ सुनाई पड़ी—यह आवाज़ डेक पर से आ रही थी। यह जहाज़ की सीटी नहीं थी, और न ही उसके धुंवाकस का भोंपू था, परन्तु किसी की खूब जानी पहचानी, कितनी ही बार सुनी हुई आवाज़ थी। इस अनपेक्षित घटना के कारण शशि चुप हो गई, और फिर कुछ ही मिनटों के अन्दर वह जहाज़ पर पहुंच चुकी थी।
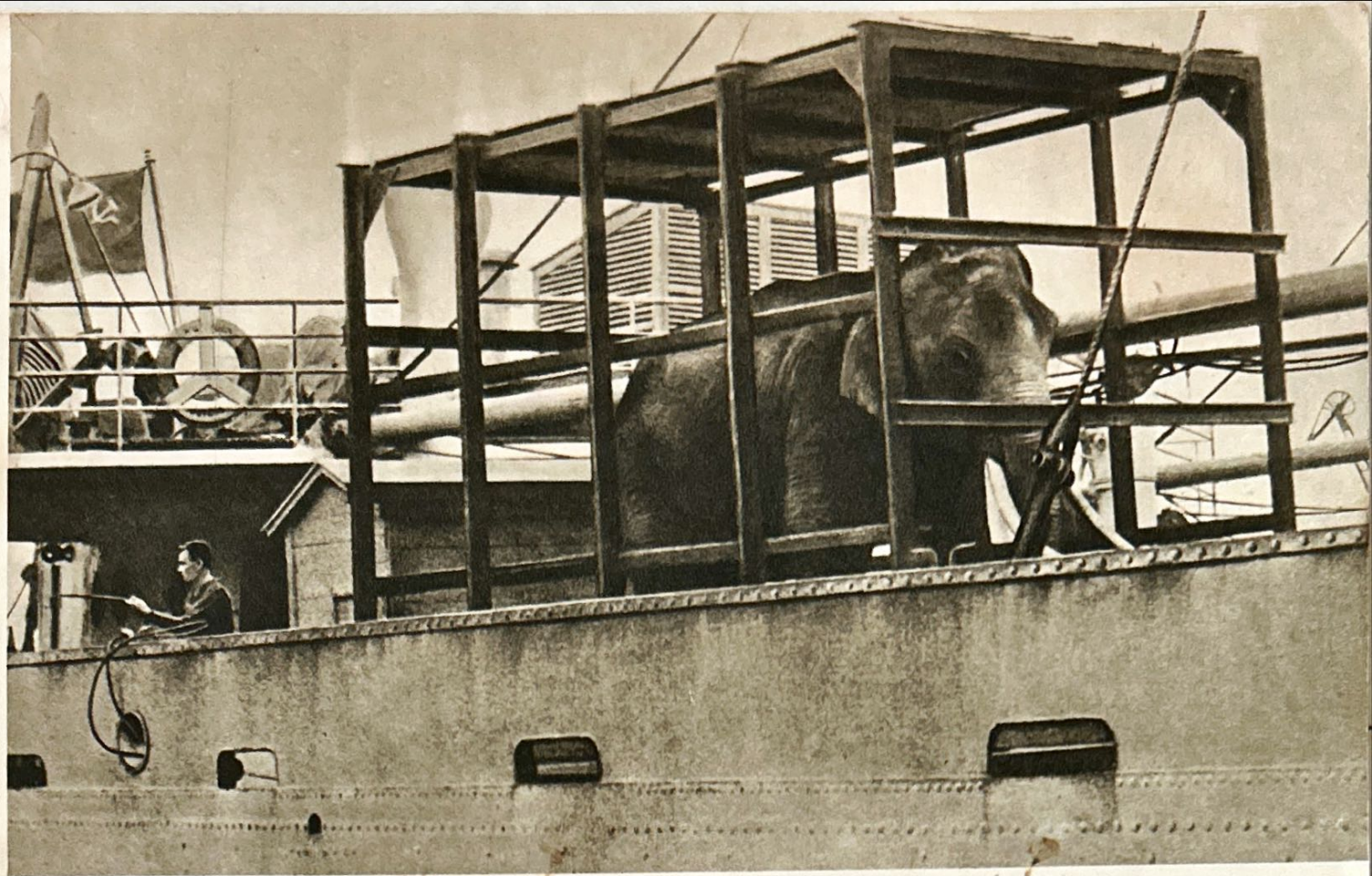
जहाज़ पर किसने तुरही बजाई ?

हाथियों के कटघरे डेक के बायें भाग में रखे गये थे।

जब नाविकों ने उनके कटघरों पर से तारपुलिन उतारा, तब रवि और शशि ने अपने दायें और बायें मुड़ कर देखा और जहाज़ पर अपने संगी साथियों को देख लिया। ये थे बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन। ये जहाज़ के दूसरी ओर के डेक पर बड़े लोहे के कटघरों में खड़े थे, और हाथियों की ओर अपनी सूंड़ फैला रहे थे।

"देखा तुमने— तुम दोनों यहां अकेले नहीं हो।" — कप्तान चेरनोब्रोवकिन ने हाथियों से कहा।

बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन — वियतनाम के हाथी हैं, और यदि हम उनके नामों का अनुवाद करें तो तुमको पता चलेगा कि बाक ज़ाप के
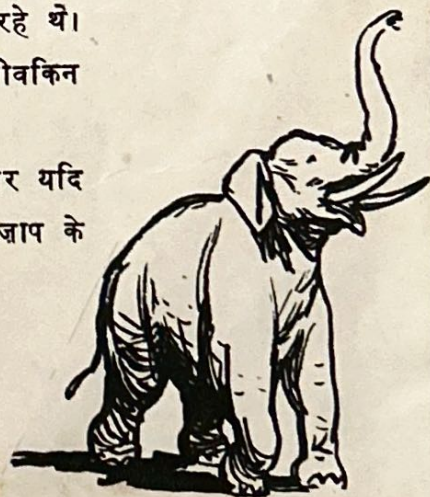
अर्थ हैं—"सफ़ेद पंजे" और वोइ काइ लोन के अर्थ हैं—"बड़ी हथिनी"। अभी बहुत समय नहीं हुआ कि इनकी मातृभूमि वियतनाम में—लड़ाई हो रही थी। जनता शत्रु से युद्ध कर रही थी। इस लड़ाई में बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन ने भी भाग लिया। दिन और रात, दलदलों और दुर्भेद्य जंगलों के बीच, ये लड़ती हुई जनता की सेना के लिये, गोलाबारूद, हथियार और खाद्यपदार्थ लाये।

वियतनाम के सिपाही और अफ़सर बड़े लाड़ और दुलार से इन्हें "हमारे युद्ध के साथी" कहते थे।

"हमारे युद्ध के साथी,"—वे आदमी भी हाथियों को यही कह कर बुलाते थे, जो उनके साथ वियतनाम से आ रहे थे, और जो स्वयं हाल ही में जनता की सेना में भर्ती हुए थे और साथ साथ युद्ध कर रहे थे।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि रवि और शशि इन सब बातों को नहीं समझ सके। और उन्हें यह भी नहीं पता चला कि "स्तावोपोल" जहाज़ बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन को वियतनाम की ओर से सोवियत जनता के लिये उपहारस्वरूप ले जा रहा था। परन्तु अपने पड़ोस में इन बड़े हाथियों को देख कर रवि और शशि को सन्तोष अवश्य हुआ और वे प्रसन्न हो गये। जैसा कि बाद में पता चला इन्हीं की वह आवाज़ें थीं जिन्हें उन्होंने लदाई के समय सुना था! बड़े हाथी छोटे हाथियों के लिये चिन्तित हो उठे थे और इस लिये तुरही की तरह चिंघाड़ उठे थे।

जल-यात्रा शुभ हो!

शाम तक सब तैयारी हो चुकी थी; रवि और शशि के कटघरे डेक के ऊपर मज़बूती से जकड़ दिये गये थे, और उनके भोजन का सामान जहाज़ के तहखानों में भर दिया गया था।

"यह जान कर क्रोध न कीजियेगा कि दो छोटे छोटे हाथियों के लिये इतने अधिक बड़े आदमियों की आवश्यकता होती है,"—डाक्टर सरदार खां ने कप्तान से कहा; "ये भारतवर्ष के एक चिड़ियाघर के प्रधान निरीक्षक हैं।"

उनके साथ साथ पशुचिकित्सक डाक्टर राओ, और मैसूर के पशुरक्षागाह के कर्मचारी मुहम्मद हाशिम और पीर पाशा भी "स्तावोपोल" जहाज़ पर सवार हुए।

डाक्टर राओ ने कहा:

"रवि और शशि आपको काफ़ी तकलीफ़ दे चुके हैं। अब रास्ते में हम स्वयं हाथियों की देखभाल करेंगे: इन्हें भोजन करायेंगे और इनके स्वास्थ्य की देखरेख करेंगे। यह बहुत ही आवश्यक है कि सोवियत बच्चों को श्री नेहरू का उपहार हर तरह से सुरक्षित दशा में मिले।"

"स्तावोपोल" जहाज़ बम्बई बन्दरगाह से छूटने वाला था। घाट पर बहुत से लोग जमा हो गये थे।

"जलयात्रा सफल हो!"—दर्शकों ने चिल्ला कर कहा।

"धन्यवाद!"—अपने भारतीय मित्रों को सोवियत नाविकों ने उत्तर दिया।

"स्पसीबा! स्पसीबा!—धन्यवाद! धन्यवाद!" डाक्टर ख़ां, डाक्टर राओ, हाशिम और पाशा ने दोहराया।

यह पहला रूसी शब्द था जिसे भारतीयों ने सोवियत जहाज़ पर सीखा।

उस दिन सन्ध्या को "स्तावोपोल" की दिनपत्रिका में निम्नलिखित लेख लिखा गया:

"बम्बई। शुक्रवार। ५ अगस्त सन् १९५५। दो हाथियों को लादा गया और चार देखरेख करने वाले आदमी चढ़े, पहुंचने का ठिकाना ओदेसा बन्दरगाह।"

तैरता हुआ चिड़ियाघर

इससे पहले "स्तावोपोल" एक साधारण जहाज़ था, परन्तु अब तो यह एक अच्छा खासा चिड़ियाघर बन गया था। और प्रत्येक चिड़ियाघर में एक भी हाथी दिखाई पड़ना कठिन है, परन्तु "स्तावोपोल" में चार हाथी थे, दो बड़े और दो छोटे।
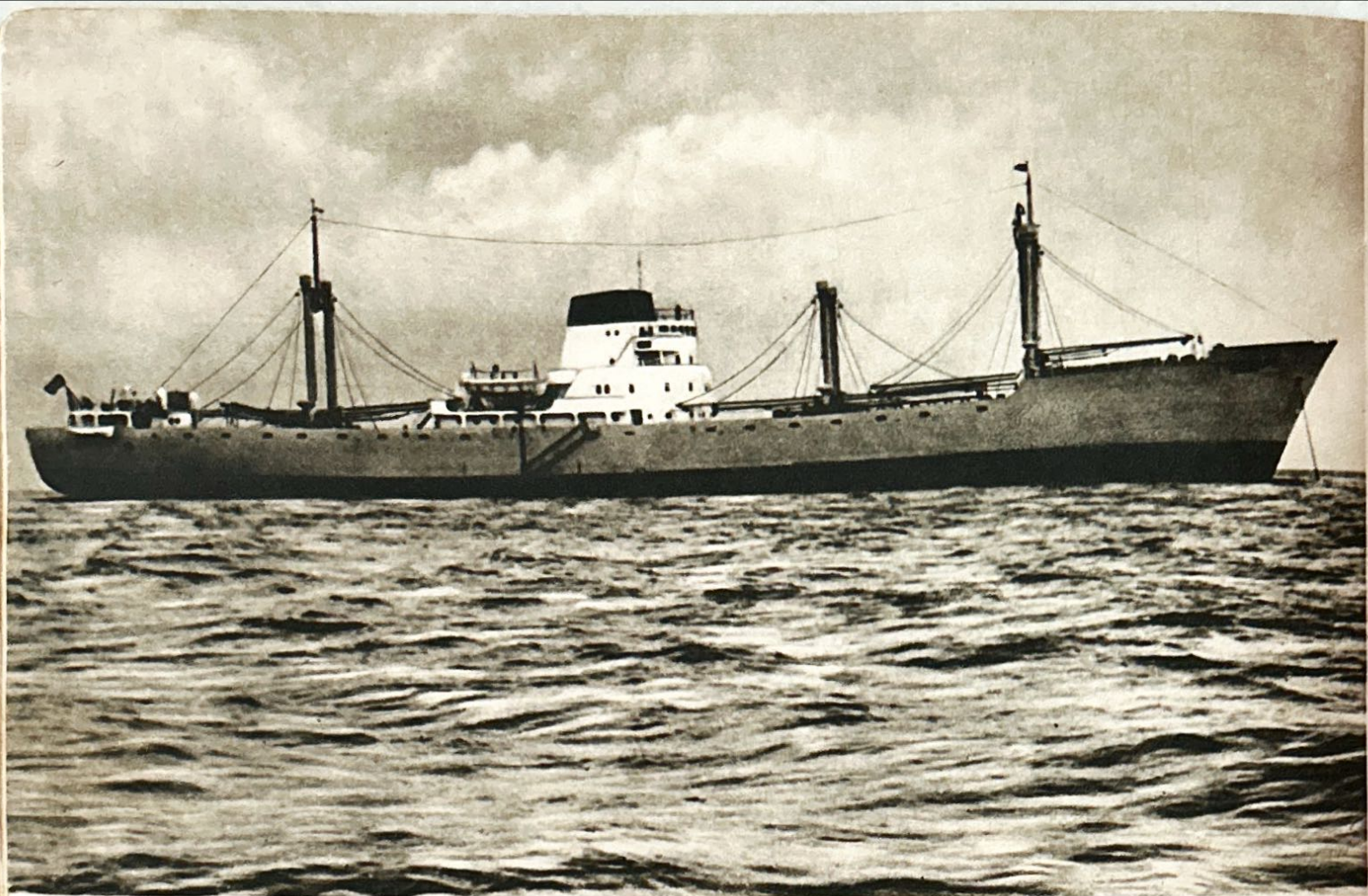
परन्तु केवल बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन और रवि, शशि ही नहीं जहाज़ में यात्रा कर रहे थे।

यहां उनसे भी छोटे यात्री थे: याश्का, बोर्का, जोर्का और माश्का। नाविकों ने चारों छोटे बन्दरों के ये नाम रख दिये थे। यह बन्दर भी वियत-नाम की ओर से जहाज़ के संचालकों को भेंट में दिये गये थे।

यह बन्दर बहुत ही नटखट थे। इस लिये इनके कारण कुछ कम परेशानी नहीं उठानी पड़ी।

याश्का — सबसे अधिक उपद्रव करता था। वह डेक के ऊपर दौड़ता, दौड़ता और खूब दौड़ता और फिर किसी के कैबिन में झपट कर घुस जाता, और यहां सम्हलना! पुस्तक उठा कर देखता — और फाड़ डालता, यदि पेन्सिल पा जाता — तोड़ डालता; नाक पर से चश्मा छीन लेता — और जब तक उसे तोड़ न डालता उसे चैन न पड़ता।

प्रत्येक कैबिन में याश्का मुंह-हाथ धोने की चिलमची में ज़रूर चढ़ता। नाविक इसकी आदतों को जान गये थे। वे चिलमची को पानी से भर देते और याश्का को उसमें स्नान करने देकर प्रसन्न कर देते।

परन्तु एक दिन याश्का मुसीबत में फंस गया। उसने डेक के ऊपर इतना उपद्रव किया कि उसका पैर फिसल गया और वह जहाज़ के किनारे से पानी में गिर पड़ा। और अवश्य ही खुले समुद्र में इस अनपेक्षित डुबकी का अन्त याश्का के लिये बड़ा ही दुखमय होता, यदि वह नाविकों द्वारा जहाज़ के किनारे से लटकाये हुए मोटे रस्से को पकड़ लेने में समर्थ न होता।

याश्का की हरकतों से सबसे अधिक दुख भोजनालय की प्रबन्धकर्त्री गलीना व्लादीमिरोव्ना को होता था। जैसे ही वह भोजन के लिये मेज़ तैयार करती, याश्का वहां पहुंच जाता: या तो रकाबी में से अण्डा चुरा लेता, या मिठाई उठा लेता, या मक्खन रोटी पर छापा मारता।

परन्तु एक दिन, याश्का बहुत ही नटखट हो गया: अपने ऊपर पौडर का डिब्बा उलट लिया और उसके बाद गलीना व्लादीमिरोव्ना से लिपस्टिक छीन कर कैबिन की सब दीवारें रंग दीं।

हां, रवि और शशि बन्दरों की यह सब दुष्टता न देख सके। याश्का, बोर्का, जोर्का और माश्का जितना बड़े हाथियों से डरते थे, उतना ही छोटे हाथियों से डरते थे, और इस लिये यात्रा के पूरे काल में वे डेक के अगले भाग में, हाथियों के कटघरों से दूर भाग जाते थे।

एक और भी बात थी, याश्का, बोर्का, जोर्का और माश्का केवल हाथियों से ही नहीं डरते थे। जैसे ही उन्हें शिपून अथवा स्वीस्त को दिखाया जाता, वे बिजली की तरह लपक कर मस्तूल के सबसे ऊपरी भाग पर चढ़ जाते थे, और तब तक नीचे नहीं उतरते थे जब तक भय का कारण हटा नहीं दिया जाता था।

शिपून और स्वीस्त—दो अजगर के बच्चे थे और ये भी वियतनाम से सवार हुए थे। अजगर भयंकर सांप होते हैं—परन्तु कोई भी नाविक उनसे नहीं डरता था। शिपून और स्वीस्त अभी बच्चे हैं और छोटे छोटे हैं—इनकी लम्बाई दो मीटर है—और मनुष्यों के लिये इनसे कोई भय नहीं है।

हां तब बात दूसरी होगी जब ये बढ़ कर आठ या दस मीटर लम्बे हो जायंगे।

परन्तु जब से रवि और शशि जहाज़ पर आ गये हैं, अजगरों का जीवन बदल गया है। कप्तान चेरनोब्रोवकिन ने कड़ी, बहुत ही कड़ी आज्ञा दे रखी है कि शिपून और स्वीस्त कभी डेक पर बाहर न लाये जायं।

"मुन्ना और मुन्नी कहीं डर न जायं!"—उन्होंने कहा।

कप्तान रवि और शशि को अपने ही तरीक़े से मुन्ना और मुन्नी कहते थे।

हर एक की अपनी पसन्द

तैरते हुए चिड़ियाघर के बहुत से दर्शक थे। सब नाविक पहरा खतम करने के बाद जानवरों के साथ समय व्यतीत करते थे।

और प्रत्येक की अपनी पसन्द थी। छोटा अफ़सर सवोस्किन बन्दरों की देखभाल किया करता था, नाविक कोलोमीएत्स अपने वियतनामी साथियों के साथ बड़े हाथियों को रसीली मिठाइयां खिलाया करता था, और मेकैनिक शिलकोव अजगरों के प्रति उत्साहशील था—वह उन्हें खाने को देता था और अपने कैबिन में ले जाकर, बिजली के लैम्प के नीचे उन्हें गरमी पहुंचाता था, जिससे शिपून और स्वीस्त को सरदी न लगे और उन्हें जुकाम न हो जाय।

केवल कप्तान चेरनोब्रोवकिन—या तो यह उनका कर्तव्य था अथवा इस लिये कि वे निश्चय नहीं कर सके कि किसको अधिक पसन्द करें—अपने जहाज़ के इन सब असाधारण यात्रियों की ओर आकर्षित थे।

परन्तु विशेषकर बहुत से दर्शक रवि और शशि के कटघरों के पास आया करते थे।

"भाई! सब लोग एक साथ बायें डेक पर न जमा हो जाओ!"—नौजवान एलेक्ट्रीशियन सोकोलोव ने कहा—"जहाज़ उलट जायगा!"

सोकोलोव हंसी कर रहा था। बहुत सम्भव था कि वह स्वयं, और सब से अधिक, रवि और शशि के प्रति उत्साहशील था।

बड़े सवेरे, उजाला होने से पहले, सोकोलोव हाथियों के पास जा पहुंचता था।

"सुप्रभात! सुप्रभात!"—वह रवि और शशि से कहता, और उसे ऐसा लगता था कि वे छोटे हाथी उसकी बात समझ रहे हों।

रवि ने कटघरे में से अपनी अभी तक ख़ूब छोटी और पतली सूंड़ फैलाई, और सामने घुटनों के बल बैठे हुए सोकोलोव को सीधा मुंह पर प्रेम से चाट लिया।

सोकोलोव ने उसकी सूंड़ में फूंक मारी, और रवि को यह अच्छा लगा। उसने फुफकारा और सामने के पैर झुकाए—और घुटनों पर बैठ गया।

"शा-बा-श, शा-बा-श मेरे छोटे हाथी!" सोकोलोव ने प्यार के स्वर में सीधे छोटे हाथी की सूंड़ में कहा, और रवि शान्त हो कर बैठ गया, जैसे नये और उसकी समझ में न आनेवाले शब्द सुन रहा हो।

और दूसरे नाविक भी कटघरे के पास आये, और एक के बाद एक ने रवि की सूंड़ पर फूंक मार कर उससे बातचीत की।

ऐसा जान पड़ता था कि शशि भी प्रसन्न होती थी जब वे उससे बातचीत करते थे; परन्तु वह अपनी सूंड़ पर किसी को फूंक नहीं मारने देती थी: मानो वह कह रही हो—"फूंको, रवि के ऊपर ज़रूर फूंको, यदि उसे यह अच्छा लगता है, परन्तु मुझे ऐसी हंसी नहीं अच्छी लगती।"

और शशि ने अपनी सूंड़ छिपा ली, और अप्रसन्न हो कर सिर फेर लिया—वह रूठ गई थी।

शशि बहुधा अपनी सूंड़ कटघरे के बाहर नहीं निकालती थी। यद्यपि वह छोटी सी थी, फिर भी न जाने कैसे वह तख्तों के बीच फंस गई। और शशि वास्तव में बहुत डर गई थी, कहीं सूंड़ से सदा के लिये हाथ ही न धोना पड़े। ठीक ही है बिना सूंड़ के हाथी हाथी नहीं है—और हथिनी हथिनी नहीं है!

और जब सोकोलोव ने शशि के कान सहलाये, तब उसने इसका विरोध नहीं किया: उसकी गोल छोटी आंखें आनन्द से चमक उठीं।

परन्तु रवि सबको अपने साथ मनचाहे खेल खेलने देता था। वह घण्टों अपने कटघरे में चारों ओर दौड़ता रहता, और जब पेट भर कर दौड़ चुकता, तो एक करवट गिर पड़ता, और फिर क्षण भर में सो भी जाता।

सोता वह केवल रात को ही नहीं था, परन्तु दिन में भी। और जागने पर, सूंड़ ऊपर की ओर उठाकर, खूब चौड़ी जम्हाई लेता, और दिलचस्पी से दाहिन डेक की ओर देखता जहां बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन के कटघरे खड़े थे। शायद आधी नींद में होने के कारण रवि उन्हें अपना माता-पिता समझता, अथवा सम्भव है स्वप्न में अपने आप को शीघ्र ही इतना बढ़ते हुए देखता कि उतना बड़ा हाथी हो जाता जैसे कि वे थे।

सुबह का और दोपहर का खाना

चौबीस घण्टे में चार बार नाविकों के आराम के कमरे में मेज़ें बिछाई जाती थीं। नाविक सुबह का नाश्ता करते थे, दोपहर का भोजन करते थे, फिर थोड़ा बहुत जलपान करते थे और रात को ब्यालू करते थे।

हाथियों को इतनी बार खाने की आवश्यकता नहीं है। उनकी विशेष प्रकार की दिनचर्या होती है और विशेष प्रकार का भोजन होता है।

सबेरे ६ बजे रवि और शशि नाश्ता करते थे। सन्ध्या को पांच बजे फिर
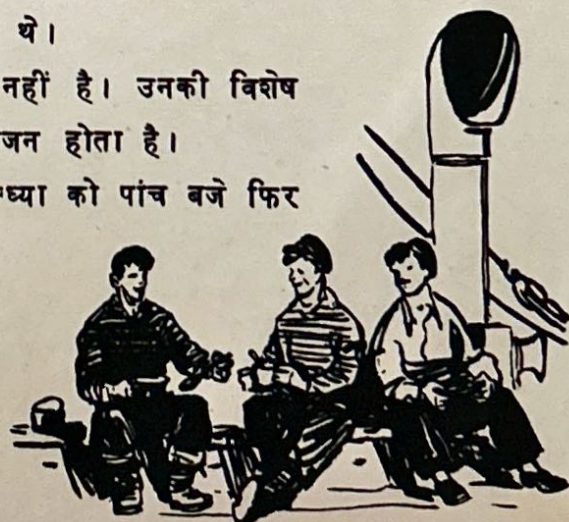
भोजन करते थे। और यद्यपि रवि और शशि अभी बिलकुल छोटे ही हैं, उनमें से प्रत्येक ने दिन भर में इतना खाना खा लिया है जितना एक बड़ा आदमी नहीं खा सकता।

सबेरे सबेरे डाक्टर राओ ने अपनी नोटबुक खोली। उसमें लिखा हुआ था: "सूखे चावल — एक किलोग्राम, चीनी — दो सौ पचास ग्राम, ताज़ा दूध — पांच सौ ग्राम, नमक — पन्द्रह ग्राम, सूखी घास — बीस किलोग्राम, ईख के चार डण्डे, हरी घास और टहनियां — स्वेच्छा से चाहे जितनी।" यह देखो इतना सब कुछ दिन भर में प्रत्येक हाथी को देना चाहिये। और बड़े हाथियों को — इससे भी अधिक। देखा तुमने कितना!

घास और सूखे चारे को तो रवि और शशि बड़ी सरलता से निभा लेते थे: वह छोटा सा गट्ठा सूंड़ से उठा कर मुंह में डाल लेते थे। ईख के डण्डे

भी वे अपने आप ही खा लेते थे। साफ़ किये हुए और बराबर भागों में कटे हुए ईख के टुकड़ों को रवि और शशि अपनी सूंड़ में सीधे पालक के हाथों में से ले लेते थे, और बड़ी योग्यता से उनको मुंह में डाल कर मिठास चूसते और चटखोरे भरते।

और बाक़ी भोजन के साथ—कठिनाई पड़ती थी।

एक बार जहाज़ पर चढ़ने से पहले, रवि के सामने पके हुए चावलों का कटोरा रखा गया। रवि ने सूंड़ को कटोरे में लटका दिया, और उसको इधर उधर चलाया, परन्तु चावलों को उठा सकने में समर्थ नहीं हुआ। अन्त में, ऐसा जान पड़ने लगा कि उसने सूंड़ में मुट्ठीभर चावल उठा लिया, परन्तु जैसे ही उसे मुंह में रखना चाहता था—चावल बिखर गया। रवि खाली सूंड़ चाटता रह गया और अप्रसन्नता से चीखने लगा।

अब कटोरा शशि के सामने रखा गया। उसने भी सूंड़ लटकाई और चावलों को कुरेदने लगी, परन्तु उसने खाने की कोशिश भी नहीं की।

रवि और शशि के लिये दूध भरे कटोरे लाये गये। दूध से, हमारे विचार में वे कभी भी इन्कार नहीं करेंगे: सब बालकों को दूध प्रिय होता है!

रवि और शशि ने दूध की ओर देखा, परन्तु शायद वे समझे नहीं कि यह किस प्रकार का तरल पदार्थ है और उन्होंने मुंह फेर लिया।

बड़े आश्चर्य की बात थी। प्रत्यक्ष तो यह हुआ कि रवि और शशि इतने छोटे हैं कि वह अपने आप भोजन करने में समर्थ नहीं हैं।

और उनकी सहायता करनी पड़ी। पके हुए चावलों में ताज़ा दूध मिला दिया, और फिर उसमें दानेदार चीनी डाल दी, सबको मिला दिया—और अब अच्छा खासा हलुआ तैयार हो गया।

मोहम्मद हाशिम ने हाथ में मुट्ठीभर हलुआ लेकर, उसे दबा दबा कर गोला सा बना दिया जिसमें वह बिखरे नहीं, और रवि के मुंह में डाल दिया। रवि ने उसका स्वाद लिया, हलुआ मीठा और स्वादिष्ट था। उसने उसे चबा चबा कर निगल लिया। फिर सूंड़ ऊपर को उठाई, और मुंह खोल दिया: "और लाओ!"

पीर पाशा ने हाथ में मुट्ठीभर हलुआ उठा लिया, उसे दबा दबा कर गोला सा बना दिया जिसमें वह बिखरे नहीं, और शशि के मुंह में डाल दिया।
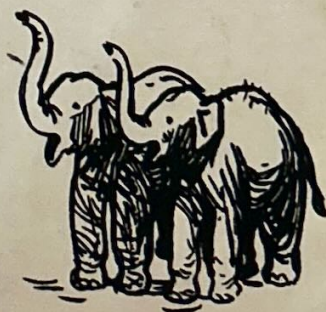
शशि ने हलुवे को चबा चबा कर निगल लिया। उसने भी सूंड़ ऊपर उठाई और मुंह खोल दिया: "और मुझे भी और दो!"

इस प्रकार जहाज़ पर रवि और शशि को भोजन कराया गया।

सब नाविक डेक पर!

मौसम नाववालों को अच्छा नहीं लग रहा था। दक्षिणी समुद्रों में अगस्त का महीना आंधी, तूफ़ान और तेज़ हवाओं का होता है। जहाज़ बम्बई जाने के रास्ते में खूब डांवांडोल हुआ, और बम्बई से लौटने के रास्ते में भी खूब डोला।

जहाज़ के डोलने में बड़े हाथियों का बुरा हाल था, और उससे भी बुरा हाल रवि और शशि का था। उनके कटघरे तारपुलिन से ढके हुए थे, परन्तु बौछारें तो हर तरह से छोटे हाथियों पर पड़ीं। समुद्र का नमकीन पानी था, और रवि और शशि की खाल चाहे कितनी ही मोटी क्यों न हो, उसमें नमक के कारण खुजली और पीड़ा हुई।

कप्तान चेरनोब्रोवकिन ने यह देखा, और इस कारण जहाज़ को हवा से उलटी दिशा में चलाने का प्रयत्न किया, जिसमें लहरें डेक के ऊपर न पड़ कर, जहाज़ के अग्रभाग पर पड़ें। जहाज़ अपनी पैनी पेंदी से लहरों को काटता गया — और बौछारें डेक पर न गिर कर दूसरी दिशाओं में उड़ती चली गईं।

परन्तु अरब सागर और हिन्द महासागर की सीमा पर अदन की खाड़ी में प्रवेश करते समय जहाज़ के डेकों पर ज़ोरों की वर्षा पड़ने लगी। समुद्र उमड़ रहा था और तूफ़ान पहले से भी अधिक तेज़ी पर था। अचानक एक बड़ी भारी लहर ने जहाज़ के ऊपर चोट की और बायें डेक को घेरती हुई डेक के फ़र्श के ऊपर लोट गयी। ठीक उसी समय लकड़ी टूटने की आवाज़ सुनाई दी और शशि की चीख। सिर से पैर तक भीगी हुई शशि एक कोने में छिपी खड़ी थी, और वहां से भयभीत दृष्टि से लहरों के वेग से टूटे हुए अपने कटघरे के दरवाज़े को देख रही थी।

"सब नाविक डेक पर!"—कप्तान चेरनोब्रोवकिन का आदेश जहाज़ पर सुनाई दिया।

सब नाविक डेक के ऊपर दौड़ आये।

"तुरन्त टूटे हुए दरवाज़े की मरम्मत करो, कटघरों को और भी मज़बूत बनाओ!"—कप्तान ने आज्ञा दी।

और नाविकों ने काम आरम्भ कर दिया।

एक घण्टे से अधिक तक डेक के ऊपर कुल्हाड़ियां चलती रहीं, और जंजीरें खड़खड़ाती रहीं। नाविकों ने बहुत अच्छी तरह काम किया: शशि का कटघरा जहां तहां से टेढ़ा मेढ़ा हो गया था उस सब को सीधा किया, और टूटे हुए दरवाज़े की मरम्मत कर दी। और भविष्य में फिर किसी प्रकार की अप्रिय घटना न हो, उन्होंने कटघरों के दरवाज़ों को साधारण तालों से न बन्द कर लोहे की जंजीरों से बन्द किया।

किस प्रकार शशि अच्छी हो गई

प्रत्येक डाक्टर के पास अपनी सुविधा और सहायता के लिये चिकित्सा के औज़ार रहते हैं। ऐसे ही चिकित्सा के औज़ार डाक्टर राओ के पास भी थे। परन्तु डाक्टर राओ साधारण डाक्टर नहीं हैं और उनके औज़ार भी साधारण प्रकार के नहीं हैं, वे आकार में बहुत बड़े हैं। डाक्टर राओ जानवरों की चिकित्सा करते हैं। रवि और शशि—इनके मरीज़ हैं।

डाक्टर राओ छोटे हाथियों को स्टेथेस्कोप लगा कर उनके धड़ की आवाज़ सुनते, थर्मामीटर लगा कर शरीर का ताप मापते, परीक्षा कर के देखते कहीं उनको खांसी या जुकाम तो नहीं हो गया है। रास्ते भर डाक्टर राओ के ऊपर भारी चिन्ताएं थीं। अब अचानक एक नयी चिन्ता उत्पन्न हो गई: जहाज़ के अधिक डांवांडोल होने के कारण शशि बीमार पड़ गई।

शशि ने खाना पीना छोड़ दिया। चार दिन और चार रात वह अपने कटघरे में लेटी रही, बिलकुल उठी ही नहीं: या तो ऊंघती रही, या सूंड़ चूसती रही।

डाक्टर राओ ने अपने दवाई के बक्स में रखे हुए चिकित्सा के औज़ारों में से एक बड़ी सी पिचकारी निकाल ली, और उसे ग्लूकोज़ से भरकर शशि के पास ले आए।

शशि ने अपने जीवन में पहिली बार पिचकारी देखी थी, और सब बच्चों की तरह वह भी डर गई। परन्तु वास्तव में सुई लगाना — इतना भयानक काम नहीं सिद्ध हुआ। शशि चिल्ला पड़ी — परन्तु डाक्टर राओ ने पहले ही खाली पिचकारी छुपा ली थी, और कटघरे के बाहर आ गये थे।

शाम को दूसरी सुई लगने के समय, शशि ने फिर से चिल्लाहट मचाई, परन्तु दूसरे दिन सुबह उसने चुपचाप बड़ी शान्ति से डाक्टर से भेंट की।

उसकी आंखों में चमक आ गई। शशि अपने पैरों पर उठ कर खड़ी हो गई, और अचानक उसने देखा कि कटघरे का फ़र्श पहले की तरह डांवांडोल नहीं होता। उसने समुद्र की ओर दृष्टि उठाई — वह भी बिलकुल शान्त था और जहाज़ के डेक के ऊपर बौछारें नहीं फेंक रहा था। शशि के सिर के ऊपर बहुत दिनों की लम्बी यात्रा में पहिली बार, सूर्य की किरणों से प्रकाशित नीला आकाश चमक उठा।

"स्तावरोपोल" जहाज़ लाल सागर के शान्त जल में यात्रा कर रहा था।

रवि और शशि की चालाकी

लाल सागर में न तो हवाएं थीं और न तूफ़ान। परन्तु इन सब के बदले चालीस डिगरी ताप की गरमी आ पहुंची। सबेरे से लेकर सांझ तक दाक्षिणापन सूर्य तपता रहता था। जहाज़ का लोहे का बना डेक पैरों के नीचे गरम तवे की भांति जलने लगा।

रवि और शशि के कटघरे फिर से तारपुलिन से ढक दिये गये, परन्तु सब कुछ किये जाने पर भी छोटे हाथियों को गरमी लगी। वे पानी मांगने के लिये बार बार सूंड़ फैलाने लगे। जी भर कर पानी पी लेने के बाद, रवि और शशि पानी अपनी पीठ पर डाल लेते थे — और स्नान करते थे।
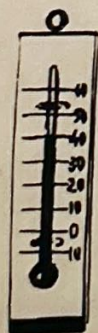
गरमी लगातार तीन दिनों तक बनी रही। यद्यपि लाल समुद्र में पानी बहुत है, परन्तु समुद्र का नमकीन पानी पीने के लिये उपयुक्त नहीं हो सकता। टंकियों में धीरे धीरे मीठा पानी कम होता जा रहा था, परन्तु पोर्ट-सईद अभी दूर था। बम्बई से चलकर वहां पहला विश्राम था। वहां पहुंच कर मीठे पानी की टंकियों को फिर से भर लेना सम्भव था।

कप्तान ने आज्ञा दे दी कि "मीठे पानी की बचत करो, उसे केवल भोजन तैयार करने और पीने के लिये रखो!"

इसके यह अर्थ हुए कि रवि और शशि अपनी पीठ पर पानी न उंडेल सकेंगे। उन्हें कुछ दिन ग़म खाना पड़ेगा।

सुबह के नाश्ते के बाद मोहम्मद हाशिम और पीर पाशा छोटे हाथियों के लिये रोज़ से आधा पानी लाये। रवि और शशि ने सब पानी पी लिया, और स्नान करने के लिये कुछ भी नहीं बचा।
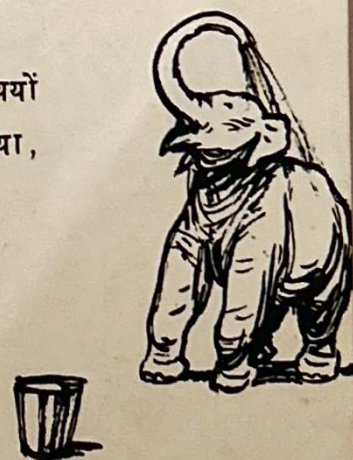
दोपहर के भोजन का समय आया, और भारतीय सेवक हाथियों के लिये पीने का पानी लाये। परन्तु पता नहीं क्यों पहले की तरह रवि पानी पीना आरम्भ नहीं करता, उलटे सारे को अपनी पीठ पर उंडेल लिया। शशि ने भी बिलकुल यही किया। बालटी खाली कर चुकने के बाद हाथियों ने सूंड़ फैलाई और धूर्तता से मोहम्मद हाशिम और पीर पाशा की ओर देखा:

"हमें और पानी दो न! तब हम पियेंगे!"

मोहम्मद हाशिम और पीर पाशा करते तो क्या करते, उन्होंने खाली बालटी उठा ली और फिर से पानी लाने चल दिये। हाथियों को बिना पिलाये नहीं रखा जा सकता!

"कितने चालाक हैं!" — कप्तान चेरनोब्रोवकिन ने आश्चर्य से सोचा। हाथियों ने सचमुच कप्तान से भी ऊंची चाल खेली!

इस बीच में रवि और शशि नयी भरी हुई बालटियों में अपनी सूंड़ें लटका चुके थे। जी भर कर पानी उंडेल लेने के बाद वे उत्साह से पानी मुंह में डाल रहे थे। क्यों न डालते, अब तो वे पानी पी सकते थे!

रवि को हो क्या गया था?

जहाज़ स्वेज़ नहर के निकट आ पहुंचा था, और यहां पहुंच कर बाधा पड़ी। सामने दो विदेशी जहाज़ अचानक आकर रुक गये। "स्तावोपोल" को भी रुक जाना पड़ा।

स्वेज़ नहर चौड़ी नहीं है, और दो चार बड़े बड़े जहाज़ यहां किसी तरह से भी एक दूसरे के बराबर से नहीं निकल सकते हैं।

जहाज़ अभी आकर रुका ही था, — कि डेक पर से एक ज़ोर की कर्णभेदी चीख़ सुनाई दी। यह रवि की चीख़ थी। वह कटघरे में तेज़ी से इधर उधर दौड़ रहा था, और अपनी सूंड़ को कभी बाईं ओर, कभी दाहिनी ओर फैला रहा था।

भारतीय सेवक डेक की ओर दौड़ पड़े। डाक्टर राओ कटघरे के भीतर घुस गये और हाथी के पास तक चले आये, उसे शान्त करने की कोशिश की, परन्तु रवि उसी प्रकार चिल्लाता रहा मानो कोई उसके ऊपर छुरी चला रहा हो।

थोड़ी देर में सामने रुके हुए जहाज, और उनके पीछे पीछे "स्तावरोपोल" भी फिर से आगे चलने लगे। रवि ने उसी समय चीखना बन्द कर दिया, और जैसे कि कुछ हुआ ही न हो, घास खाना शुरू कर दिया।

कुछ घण्टों के बाद जहाज को फिर से रुक जाना पड़ा, और ठीक उसी समय रवि ने चीखना आरम्भ कर दिया।

"आखिर रवि को हो क्या गया है? शायद बीमार तो नहीं पड़ गया?" —डाक्टर राओ चिन्तित हो उठे।

जब "स्तावरोपोल" स्वेज नहर से बाहर निकल आया, और पोर्ट-सईद के एक घाट पर आकर लंगर डाल दिया, तो रवि की चीखें फिर से सुनाई देने लगीं। वह लगातार कई घण्टों तक चीखता रहा, बड़े दुःखी स्वर से चिल्लाता रहा जैसे सहायता के लिये पुकार रहा हो, और साथ ही साथ अपनी सूंड़ भूमि की ओर फैलाता रहा।

अब जाकर सबकी समझ में आया कि रवि क्यों चीखा था। जितनी बार जहाज रुकता था वह समझता था कि यात्रा समाप्त हो गई और भूमि पर उतरने की आज्ञा चाहता था। सचमुच रवि लम्बी समुद्री यात्रा से उकता चुका था।

फिर से सब नाविक डेक पर!

एक दिन सबेरे फिर यह आज्ञा सुनाई दी:

"सब नाविक डेक पर!"

सब नाविक जो पहरे पर नहीं थे, डेक के ऊपर भाग आए: क्या यह सम्भव था कि फिर कोई अप्रिय घटना हो गई?

भूमध्य सागर शान्त लहरा रहा था। डेक के ऊपर शान्ति छाई हुई थी। कटघरे अपनी जगह पर बने हुए थे, हाथी सजीव और स्वस्थ थे। तो फिर बात क्या थी?

"आज नहाने-धोने का दिन है,"—कप्तान चेरनोव्रोवकिन ने समझाया— "आज जानवरों को नहलाना है।"

डेक के ऊपर एक गहरा बरतन लाया गया, और उसे ऊपर तक गरम पानी से भर दिया गया:

"चलो बन्दरो! चलो पानी के अन्दर कूद पड़ो!"

याश्का सबसे पहले पानी के अन्दर कूद पड़ा। जितनी देर वह पानी में छप छप करता रहा और डुबकियां लेता रहा, बाक़ी बन्दर काफ़ी दूर पर बैठे रहे, और उन्होंने पानी के पास आने की चेष्टा तक नहीं की।

लो, देखो अब छोटा अफ़सर सवोस्किन आ पहुंचा। उसने याश्का को अगले पंजों से पकड़ कर डेक के ऊपर खींच लिया:

"तू नहा चुका—बहुत हो चुका!"

बोर्का, जोर्का और माश्का इसी की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे दौड़ कर बरतन के पास पहुंच गये और झट से पानी के अन्दर कूद पड़े।

याश्का गुस्से से चीख़ पड़ा। अपने आप को किसी तरह सवोस्किन के हाथों से छुड़ा कर, वह बरतन की ओर दौड़ा, और झट बिना सोचे विचारे डुबकी लेते हुए बन्दरों को डुबाने लगा।

छोटे अफ़सर सवोस्किन को फिर से याश्का को पंजे पकड़ कर उठा लेना पड़ा, और उसे खींच कर बरतन से दूर ले जाना पड़ा।

और फिर सबसे मनोरंजक घटनाएं जहाज़ के बायें भाग में हो रही थीं।

रवि और शशि अपने ही तरीक़े से स्नान कर रहे थे: एलेक्ट्रीशियन सोकोलोव उनके ऊपर आग बुझाने वाला होज़ चला रहा था।

रवि न जाने क्यों पानी से डरता था। वह कटघरे में कूद रहा था, चीख़ रहा था, और दीवारों पर अपने अगले पैर जमा कर खड़ा हो रहा था, अपनी सूंड़ मोड़ कर अपने आप को पानी की धारा से छिपाने की कोशिश कर रहा था।

शशि बिलकुल दूसरी तरह से व्यवहार कर रही थी: वह न तो चीखी-चिल्लाई, न ही कोने में छिपने की कोशिश की और न ही अपने पिछले पैरों पर खड़ी हुई, परन्तु बड़ी शान्ति से कभी दाहिनी और कभी बायीं ओर से मुड़ मुड़ कर पानी अपने ऊपर ले रही थी।

मालूम होता है शशि को स्नान करना बहुत अच्छा लगता है।

जहाज़ घाट लगा

सोलह दिन और रात रवि और शशि को जहाज़ पर यात्रा करते व्यतीत हो गये। अन्त में "स्तावोपोल" ओदेसा पहुंच गया। यात्रियों को किनारे उतारने का समय हो गया। पहले जैसा बम्बई में हुआ था, एक बड़ा उठाने वाला क्रेन जहाज़ के किनारे आ लगा।

इधर डेक के ऊपर पहले से ही सब तैयार था: नाविकों ने बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन के कटघरे खोल दिये थे: वियतनामी महावत हाथियों की
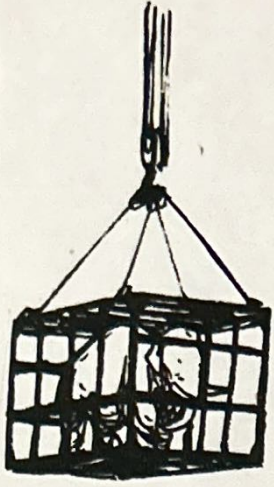
पीठ पर अपनी अपनी जगह बैठ गये थे। ऐसे समय पर हाथियों को अकेले छोड़ना असम्भव था,—वे उतारने के समय डर सकते हैं, कटघरों को तोड़ सकते हैं और तब तो सभी कुछ से हाथ धोना पड़ेगा!

सब से पहले बाक ज़ाप जहाज से उतारा गया। उठाने वाले क्रेन ने उसके कटघरे को उठा लिया और घाट की ओर ले जाने लगा। ऐसा जान पड़ा कि सब काम ठीक चल रहा था। बाक ज़ाप शान्ति से अपने कटघरे में खड़ा था, और केवल धीरे धीरे अपनी सूंड़ एक ओर से दूसरी ओर हिला रहा था।

धीरे धीरे क्रेन, घाट पर खड़ी हुई रेलगाड़ी की ओर मुड़ चुका, क्रेन चलाने वाला भी कटघरे को प्लेटफ़ार्म पर उतारने की तैयारी कर चुका था, कि अचानक कटघरे का तला नीचे से टूट पड़ा, और हाथी का दाहिना अगला पैर आकाश में लटकने लगा। क्रेन चलाने वाले ने तुरन्त मोटर बन्द कर दी, और बाक ज़ाप का कटघरा प्लेटफ़ार्म के ऊपर हवा में लटकता रहा।

अब क्या किया जाय? यदि कटघरे को प्लेटफ़ार्म पर उतारते हैं तो हाथी का पैर कुचला जाता है। और बाक ज़ाप को हवा में लटका रखना भी भय से खाली नहीं। डरा हुआ हाथी अन्त में कटघरे के फ़र्श को तोड़ कर निकल सकता था और इस प्रकार चोट खा सकता था।

अब पता चला कि हाथियों की पीठ पर वियतनामी महावत व्यर्थ ही नहीं बैठे थे। महावत ने बाक ज़ाप की गरदन बाहों में ले ली, और बड़े प्रेम से उसकी ओर देखते हुए, उससे पाँव ऊंचा कर लेने को कहने लगा। बाक ज़ाप ने भी जैसे कि वह समझ ही रहा हो कि मामला क्या है, अपना अगला पैर धीरे से ऊपर उठा लिया, और ठीक उसी क्षण कटघरे सहित अपने आप को रेलगाड़ी के प्लेटफ़ार्म पर पाया।

अब वोइ काइ लोन की बारी आई। बाक ज़ाप के साथ जो कुछ बीती थी उसे देख कर इस हथिनी ने स्वयं अपनी रक्षा करने का निश्चय कर लिया था। जब उठाने वाले क्रेन ने वोइ काइ लोन को डेक पर से उठा लिया, तब उसने अपनी सूंड़ फैलाई और उसके द्वारा कटघरे के तले को सहारा देने लगी। हथिनी को प्लेटफ़ार्म पर उतारने से पहले, उन्हें कुछ मिनटों तक कटघरे को

हवा में लटकाये रखना पड़ा जिसमें उसकी सूंड़ में चोट न लगे। और वोइ काइ लोन कटघरे के तले से अपनी सूंड़ हटाने को आसानी से राज़ी नहीं हुई।

परन्तु रवि और शशि तो बहादुर हाथी निकले : उनको उतारने में किसी को भी चिन्तित होना नहीं पड़ा। उठाने वाले क्रेन ने इतनी आसानी से हाथियों के कटघरों को जहाज़ के डेक पर से उठा लिया जैसे कि वे खाली लकड़ी के बक्स हों।

अब जहाज़ पर केवल बन्दर और सांप रह गये। इन्हें जहाज़ द्वारा अभी और यात्रा करनी थी। ओदेसा से—नोवोरोस्सीइस्क तक। फिर नोवोरोस्सीइस्क से इन्हें और भी दूर जाना था—स्तावोपोल नगर के पयोनियर बालकों के पास, जिनसे जहाज़ के नाविक और अफ़सरों की बहुत दिनों से मित्रता थी।

नई पड़ोसिन

ओदेसा के बन्दरगाह पर हाथी अलग अलग हो गये। वियतनामी हाथी बाक ज़ाप और वोइ काइ लोन मालगाड़ी पर लद कर दूर दूर नगरों में चले गये।

परन्तु भारतीय हाथियों की यात्रा छोटी निकली।

दो लारियों पर रवि और शशि को लाद कर, नगर की सड़क द्वारा ले जाया गया। चिड़ियाघर के फाटक के अन्दर पहुंच कर हाथीघर के सामने जाकर रुके।

"कितने छोटे बच्चे हैं!"—चिड़ियाघर के प्रधान कर्मचारी ख़रितोन ख़रितोनोविच को आश्चर्य हुआ और... वह जल्दी जल्दी उठाने वाले क्रेन को बुलाने के लिये चला। यद्यपि रवि और शशि छोटे हैं, फिर भी वे साधारण बच्चे नहीं हैं, वे हाथियों के बच्चे हैं। उठाने वाले क्रेन के बिना काम चलना असम्भव है!

उठाने वाले क्रेन को लेकर एक विशेष प्रकार की लारी लायी गयी, और कटघरे लारियों पर से उतार लिये गये।

पहली बार, उस लम्बी यात्रा के बाद, रवि और शशि ने पृथ्वी पर पांव रखा। झूमते हुए और अस्थिर गति से वे हाथियों के अखाड़े की ओर चले, यह अखाड़ा लोहे की छड़ों से घिरा हुआ था, और यहां पहुंच कर जंगले के पीछे रवि और शशि ने एक बड़ी हथिनी को देखा।

"इससे जान-पहचान करो, यह तो हमारी 'दिल्ली' है,"—ख़रितोन ख़रितोनोविच ने हाथियों से कहा। "यह भी अभी बच्ची है, केवल दस बरस की है।"

हाथियों ने दिल्ली की ओर देखा: "अच्छा यह कैसी बच्ची है! ऊंचाई तो सारे घर के बराबर है और वज़न शायद तीन टन होगा।"

रवि और शशि को पास ही लगे हुए दो वृक्षों से बांध दिया गया। हाथियों ने दिल्ली की ओर अपनी सूंड़ें फैलाईं, और रवि ने तो उसके ख़ूब निकट आने की कोशिश भी की।

परन्तु फिर पता चला कि यह नई पड़ोसिन आगन्तुकों के साथ जान-पहचान नहीं करना चाहती। वह उत्तेजित हो गई, और चिंघाड़ने लगी, और जंजीर तुड़ाने की कोशिश करने लगी, वह नये छोटे हाथियों को मारना भी चाहती थी।

उद्वेजित दिल्ली को छोटे हाथियों से दूर, अखाड़े के बायें कोने में हटा देना पड़ा।

छोटे हाथी इस अनादर से रूठ चुके थे, और दिल्ली की ओर देख भी नहीं रहे थे। रवि ने अपनी सूंड़ शशि की गरदन पर रख दी और बड़े प्रेम से उसकी थोड़े काले बालों से ढकी पीठ को सहलाने लगा।

एक पहर आराम

दोपहर के भोजन के समय हाथियों के लिये रोज़ का साधारण खाना लाया गया: पके हुए चावल, दूध और चीनी के साथ।

शशि ने चावलों के कटोरे की ओर देखा और मुंह फेर लिया, "नहीं चाहती हूं—बस!"

शशि यों ही नख़रा कर रही थी।

रवि ने चावल के कटोरे को देखते ही, सूंड़ उठाई और मुंह खोल दिया: "और मैं इतना मूर्ख नहीं हूं जो परोसी थाली के सामने से उठ जाऊं!"

उसने एक मुट्ठी चावल खाया, और उसके बाद दूसरी, तीसरी, चौथी, पांचवी... और बात की बात में कटोरा ख़ाली कर दिया!

शशि ने देख लिया कि रवि ने केवल अपना ही नहीं परन्तु उसके भी हिस्से का चावल खा लिया। जब ईख के डण्डे लाये गये तब उसने पहले से ही अपनी सूंड़ से महावत के हाथ में से मीठे सरस गन्ने झपट लिये।

और फिर शशि ने घास खाने से भी इन्कार नहीं किया। ठीक है उसने घास उठा उठा कर पीठ पर नहीं डाली, जैसे कि रवि कर रहा था, परन्तु हां! घास के गट्ठे उठा कर मुंह में डालने में शशि रवि से पीछे नहीं रही।

दोपहर के भोजन के बाद—आराम होता है।

शशि एक ओर को हट गई, स्थान पसन्द कर लिया, जहां धूप नहीं आती, और एक करवट लेट गई। घण्टे-दो घण्टे ऊंघ लेने में कोई हर्ज नहीं है!

परन्तु दिखाई देता है कि यह रवि को अच्छा नहीं लगता। वह शशि की ओर चला आया और पैरों को मोड़ कर उसके ऊपर गिर पड़ा!

शशि करती तो क्या करती, उसे झटक मार कर उठना पड़ा। उसने बड़ी अनिच्छा से अपना सिर हिलाया, कुछ दूर आगे बढ़ गई और फिर से लेट गई: "रस्सी छोटी है। यहां पर तू मुझे नहीं पा सकता।"

और हुआ भी यही: रवि ने उसके निकट आने की कोशिश की, परन्तु रस्सी उसे जाने नहीं देती। शशि शान्त होकर बैठी रही और उसने आंखें बन्द कर लीं।

अचानक—यह क्या हुआ? कोई उसकी पूंछ पकड़ कर खींच रहा था—एक बार, दूसरी और तीसरी!

शशि चीख़ पड़ी और उठ कर पैरों पर खड़ी हो गई: "कैसी मुसीबत है!"

पता चला कि यह रवि था जो सूंड़ फैला कर उसकी पूंछ खींच रहा था।

अखाड़े के दूसरे कोने में ऊंघती हुई दिल्ली ने शशि की आवाज सुनी और जाग पड़ी।

खूब पहर भर आराम हो रहा है!

स्नान

हाथियों के साथ साथ उनकी झूलें भी चिड़ियाघर में लाई गई थीं—झूलें गरम कपड़े की बनी थीं।

"अगर वायु का ताप पन्द्रह डिगरी धनमाप से नीचे हो"—डाक्टर राओ ने राय दी—"तब उन्हें झूलें पहना दो। नहीं तो रवि और शशि को ठण्ड लगने की सम्भावना है। हाथी के बच्चों को भी सरदी और जुकाम हो जाता है।"

अभी तक झूलों की आवश्यकता नहीं पड़ी थी। छाया में ताप—तीस डिगरी, और धूप में उससे भी ज्यादा था।

चिड़ियाघर में हाथियों के स्नान के लिये कोई विशेष तालाब नहीं था। इस लिये अखाड़े के अन्दर लम्बा रबड़ का होज़पाइप फैला दिया गया, जिसके द्वारा सड़कें धोई जाती हैं।

"कोई है जो स्नान करना चाहता है?"

कोई स्नान करना चाहता था।

आरम्भ में, जिसमें हाथी डर न जायं, पानी की धारा आकाश की ओर डाली गयी। और इस प्रकार अच्छी ख़ासी वर्षा कर दी गयी। पानी रवि और शशि के ऊपर पड़ने लगा। हाथियों के बच्चे अखाड़े में मस्त होकर घूमने लगे, पानी की बड़ी से बड़ी बूंदों के नीचे आने की कोशिश करने लगे।

तब जाकर धारा, सीधे हाथियों के ऊपर डाली जाने लगी।

फुत्कार करते हुए और चीख़ मारते हुए, एक दूसरे को धक्का देते हुए, रवि और शशि ने अगले घुटने झुका लिये और अपने पिछले पैर उठा कर शरीर फटकारा और फिर अपनी पीठें पानी की धारा के नीचे कर दीं।

"अच्छी चीज़ की भी अति नहीं करनी चाहिये"—हंसते हुए प्रधान कर्मचारी ने कहा—"अब हम तुम्हें रोज़ स्नान करायेंगे।" ख़रितोन ख़रितोनोविच हाथियों से कम स्नान से प्रसन्न नहीं हुआ। उसने देखा कि रवि और शशि अपनी नयी जगह से थोड़ा थोड़ा अभ्यस्त होने लगे थे।
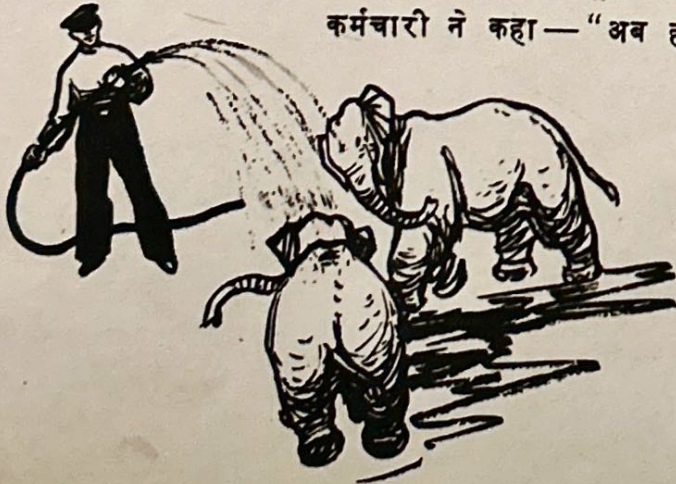
रवि और शशि टहलने जाते हैं

सबेरे सबेरे, चिड़ियाघर में दर्शकों की भीड़ इकट्ठी होने के पहले, रवि और शशि टहलने जाते हैं।

जब रवि रस्सी पकड़ कर, हाथीघर के बाहर ले जाया जाता है, तब शशि विशेष निमन्त्रण की प्रतीक्षा नहीं करती; वह स्वयं ही रवि के पीछे चलने लगती है। एक ओर से दूसरी ओर कुछ कुछ झूमते हुए छोटे हाथी एक दूसरे के पीछे, चिड़ियाघर की पेड़ों से घिरी प्रधान सड़क पर टहलते हैं, राह में वे चीलों, लोमड़ियों, शेरों, शुतुरमुर्गों, तेंदुओं और हिरनों के कटघरों के
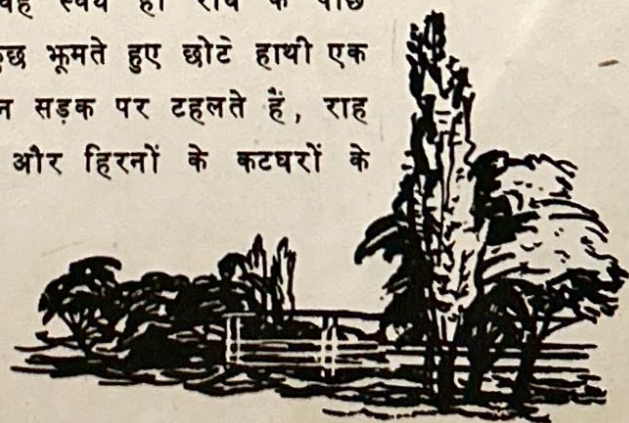
पास से निकलते हैं। रवि और शशि के सिर थोड़ा झुके हुए हैं, सूंड़ें लगभग पृथ्वी को छू रही हैं, परन्तु यह मत समझना कि छोटे हाथी अप्रसन्न हो गये हैं। रवि और शशि कुछ अपनी ऐंठ दिखा रहे हैं।

चिड़ियाघर के ठीक सामने वाले कोने में — छोटी सी खुली जगह है। यहां छोटी झाड़ियां और नीची, घनी घास उगी हुई है। हाथी यहां आकर रुक जाते हैं। रवि रस्सी से खोल दिया जाता है, और फिर छोटे हाथी घास चरने लगते हैं।

रवि अभी घास उखाड़ नहीं पाता, परन्तु वह सीख रहा है। वह ज़्यादा घास पकड़ना चाहता है — परन्तु सूंड़ अभी समर्थ नहीं है, और हाथी के बच्चे में अभी इतना बल भी तो नहीं है। बीच बीच में एकाध बार रवि रसीली हरी घास की एक मूंठ स्वयं उखाड़ने में समर्थ हो जाता है, और फिर प्रसन्न होकर उसे मुंह में रखने से पहले, बड़ी देर तक सावधानी से उसमें से मट्टी झाड़ता है।

शशि आलसी है और अपने आप घास उखाड़ने की कोशिश नहीं करती। घास के गट्ठों को उसकी सूंड़ में रखना पड़ता है। शशि को सिखाने के लिये रवि उसकी सूंड़ से घास लेकर एक तरफ़ को फेंक देता है।

"सीखना चाहिये। देख मैं कैसे करता हूं!" मानों रवि उससे कह रहा हो, और फिर घास के एक मुट्ठे को सूंड़ में लेकर उसको ज़मीन से उखाड़ने की कोशिश करता है।

लौटते समय हाथी बिलकुल वही करते हैं जैसा पहले किया था: आगे आगे रस्सी के सहारे बड़े ठाट से रवि चलता है, और उसके पीछे अकेली — शशि।

आधी दूर लौटने पर, पानी से भरे एक पीपे के निकट — फिर से रुक जाते हैं। पीपा ऊंचा है — छोटे हाथी देख नहीं पाते कि भीतर क्या है, परन्तु रवि तुरन्त अपनी सूंड़ ऊपर को उठाता है, और उसे पानी के अन्दर डाल देता है। क्षण भर में रवि सूंड़ को मुंह के अन्दर ले जाता है — वह तो पानी पी रहा है।

शशि की समझ में नहीं आ रहा है कि रवि क्या करता है। वह बड़े ध्यान से देखती तो है, परन्तु पीपे के पास नहीं आती।

इसकी तो सहायता करनी ही पड़ेगी। शशि को पीपे के पास लाया जाता है और इसकी सूंड़ पानी के अन्दर डाल दी जाती है। परन्तु शशि फिर नखरा
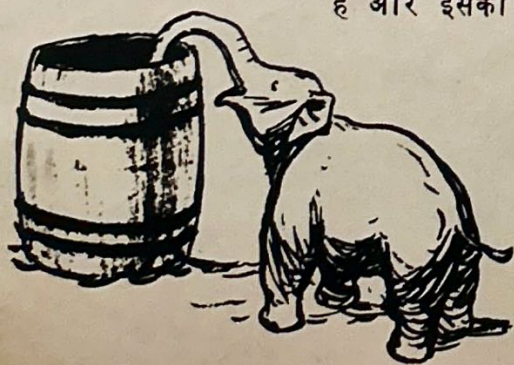
करती है—वह अपनी सूंड़ बाहर निकाल लेता है। तब चिड़ियाघर के कर्मचारी शशि के ऊपर चुल्लू भर भर का पानी छिड़कते हैं।

"देख शशि, यह पानी है, पानी! तू तो पानी में नहाना पसंद करती है और इसे पीती भी तो बड़े चाव से है। ले अब पी ले!"

परन्तु शशि तो सिर हिलाती है, अपने ऊपर से पानी झाड़ देती है, और पीने से अब भी इन्कार करती है।

जग की सहायता लेनी पड़ती है। उसे पानी से भरकर शशि के पास ले आए। शशि ने पानी देख कर खुशी से जग के अन्दर सूंड डाल दी—और पानी पीने लगी।

रवि पीपे के निकट खड़ा रहा, परन्तु शशि को जग से पानी पीते देख कर तुरन्त मुड़ा और उसकी ओर सूंड़ बढ़ाई। उसने गुस्से से फुफकार भी मारी: शशि क्यों इस सुन्दर, चमकते हुए जग से पी रही है, और उसे इस मामूली पीपे से पीना पड़ रहा है? यह कहां का न्याय है!

परन्तु शशि रवि से नाराज़ नहीं हुई, और उसके सूंड़ को जग में डालने का विरोध भी नहीं किया: पी लेने दो बिचारे को। मित्र के लिये सब कुछ ही माफ़ है!

पड़ोसिन का व्यवहार बदल जाता है

रवि और शशि टहल चुके हैं—अब लौट चलने का समय हो गया है। वे फिर से प्रधान सड़क पर लौट आए और हाथीघर की ओर चलने लगे। परन्तु छोटे हाथी अभी दो पग ही चल पाये थे, कि उन्होंने किसी की चीख सुनी।

चिड़ियाघर में अक्सर तरह तरह के जानवर और चिड़िया चीखा करते हैं, और हाथियों को पहले से ही इन्हें सुनने की आदत पड़ी हुई है। यहां तक कि जब सिंह अपने कटघरे में गरजता है, और पास वाले कटघरे में सिंहनी भी अपने तीन छोटे बच्चों की रक्षा के हेतु गरजती हुई उसका अनुसरण करना आरम्भ करती है, तो रवि और शशि इनकी ओर ज़रा ध्यान भी नहीं देते हैं।

परन्तु अबकी बार की चीख़ आश्चर्यजनक पहचानी हुई थी।

"क्या यह सम्भव था कि यह चीख़ दिल्ली की हो?"

रवि और शशि शीघ्रता से हाथीघर की ओर बढ़े। और दिल्ली ने यह देख कर कि रवि और शशि कुशलता से सर्वांगसम्पूर्ण लौट आये हैं, चीखना बन्द कर दिया, और प्रसन्नता से सूंड़ हिलाने लगी:

"जल्दी आ जाओ न, मैं कब से तुम्हारे लिये व्याकुल हो रही हूँ!"

रवि और शशि अपने हाथीघर के अखाड़े के अन्दर आ गये, और झट से दिल्ली की ओर मुड़े।

"शायद इन्हें अधिक निकट न आने देना ही अच्छा होगा। सम्भव है यह फिर मार बैठे!"—खरितोन खरितोनोविच ने चिन्तित होकर कहा।

परन्तु पता चला कि प्रधान कर्मचारी व्यर्थ ही चिन्तित हो रहे थे।

दिल्ली ने अपने पास आकर खड़े हुए छोटे हाथियों को सूंड़ से सहलाया, और उसकी छोटी सदय आंखें स्नेह और प्रसन्नता से चमकने लगीं। और रवि और शशि तो अपनी नयी पड़ोसिन से पहली अप्रिय भेंट कबके भुला चुके थे, और बड़ी शान्ति से उसकी विशाल बलशाली टांगों से अपने आप को रगड़ रहे थे।

चिड़ियाघर में भेंट

इस से पहले कभी चिड़ियाघर के फाटक पर दर्शकों की लाइन नहीं लगी, परन्तु आज लगी हुई है। आज रविवार है और लोग भी विशेषकर अधिक हैं।

"लगता है कि लाइन में खड़ा होना पड़ेगा। क्या विचार है?"—कप्तान चेरनोब्रोवकिन ने अपने लड़के से पूछा।

"खड़े रहेंगे!"

वोवा चेरनोब्रोवकिन केवल पांच बरस का है, परन्तु वह सारे दिन लाइन में खड़े रहने के लिये तैयार है: उसे तो चाहे कितना भी परिश्रम क्यों न करना पड़े रवि और शशि को देखना आवश्यक है। बन्दरगाह पर जब लोग उसके पिता के जहाज़ का स्वागत करने के लिये आए थे, तब वोवा ने बड़े हाथियों को तो अच्छी तरह देख लिया था परन्तु छोटों को उतनी अच्छी तरह नहीं देख पाया—क्योंकि कटघरों के भीतर वे अच्छी तरह से दिखाई नहीं पड़ रहे थे।

परन्तु भाग्यवश उन्हें लाइन में सारे दिन न खड़ा रहना पड़ा। शीघ्र ही कप्तान चेरनोब्रोवकिन और उनका लड़का देख रहे थे कि रवि और शशि किस प्रकार एक दूसरे से घास खींच खींच कर खेल रहे हैं।

आदमियों की घनी भीड़ ने अखाड़े को घेर रखा था। और यह कहा नहीं जा सकता कि इस भीड़ में कौन अधिक थे — बड़े आदमी अथवा बच्चे। हां इतना निश्चित था कि रवि और शशि को — क्या बड़े क्या छोटे सभी देखना चाहते थे।

"पर उन में से कौन कौन है?" — वोवा चेरनोब्रोवकिन ने अपने पिता के कन्धे पर कूदते हुए पूछा।

"दाहिनी ओर वाला—लड़का है और नाम रवि है, और बायीं ओर वाली—लड़की है और नाम है शशि,"—पिता ने समझाया।

कप्तान के निकट ही उनके जहाज़ के साथी खड़े थे—एलेक्ट्रीशियन सोकोलोव, नाविक कोलोमिएत्स, छोटा अफ़सर सवोस्किन और मेकैनिक इलीकोव। "स्ताव्रोपोल" के नाविकों से अधिक विशेषकर और किसको रवि और शशि को देखने में इतनी प्रसन्नता हो सकती थी। वे सब बिना एक दूसरे से पहले से कहे हुए ही, आज चिड़ियाघर में आ पहुंचे थे, यह देखने के लिये कि उनके पूर्व यात्री अच्छे तो हैं।

"और ये आपकी ओर देखते क्यों नहीं हैं?"—वोवा ने फिर से चाव से पूछा।

"शायद हमें भूल गये हैं"—पिता ने उत्तर दिया।

"हां ये अभी छोटे ही तो हैं। और आदमी भी तो कितने इकट्ठे हैं। ये हमें देख भी कैसे सकते हैं!"—सोकोलोव ने बात जारी रखते हुए कहा जैसे कि वह रवि और शशि का पक्ष लेकर बोल रहा हो।

इसी समय एक अनपेक्षित घटना हो गई।

रवि और शशि जंगले की ओर मुड़ आए और अपनी सूंड़ों को हिलाने लगे।

"देखो! देखो! हमें पहचान लिया, पहचान लिया!"—हर्ष से सोकोलोव चीख उठा।

नाविक आनन्द से भर गये। और हर्ष उन सब पर भी छा गया जो चारों ओर घेरे खड़े थे। और भारतीय हाथी रवि और शशि खुशी खुशी खड़े अपनी सूंड़ें हिलाते रहे, जैसे अपने पुराने और नये सोवियत मित्रों का अभिनन्दन कर रहे हों।